14-1-87

□ इंद्रधनुष □ नवभारत-

संगीत का सही ज्ञान उस्ताद की शागिर्दी में

गज़ल खुदा की इबादत है, यही आशय था, गज़ल के जन्म पर। जब तक गज़ल गायकी में उर्दू के अल्फाज़ों के साथ- साथ पारंपरिक और शास्त्रीय रागों के अनुरूप रागों का चयन कर उसकी प्रस्तुति न की जाए, गज़लों की मौलिकता के साथ आत्मिक श्रृंगार का भी अभाव हो जाता है। श्रोता– वर्ग में आज गज़ल की खुमारी जोरों पर है। विदेशी धुनों के साथ गज़ल गायकी को पेश करना -इस शैली की तौहीन करना है- यह विचार रखते हैं भिलाई के लोकप्रिय युवा गज़ल गायक अश्वनी कुमार वर्मा। इनका ख्याल है कि प्राचीन गज़ल गायकी के आज भी दिलोदिमाग पर छा जाने की वजह है- उनकी प्रस्तुति का बेहतरीन अंदाज। स्वयं वे अपने पिताजी की शैली को आगे बढ़ाने में पूरा विश्वास रखते हैं। छोटी– सी उम्र से ही इस क्षेत्र में संलग्न हो, उन्होंने शास्त्रीय संगीत, ठुमरी, भजन व गज़ल में निपुणता हासिल कर विविध कार्यक्रमों में अपनी उत्कृष्टता का परिचय दिया है एवं अब इसी विधा में छात्र– छात्राओं को प्रशिक्षित करने में रत हैं। इसी दौरान उनके निवास पर उनकी गाई गज़लों का आनंद उठाते हुए संगीतमय वातावरण में उनसे चंद सवाल-

? गज़ल गायकी की किन विशेषताओं से प्रभावित हो, आपने इस क्षेत्र में प्रवेश का निश्चय किया एवं उसकी तालीम आपने किसकी शिष्यता में पूर्ण की?

□□ ये कहना मैं बेहद जरूरी समझूंगा कि संगीत की हर गायन शैलियों का अपना एक खास दर्जा है, जैसे– ध्रुपद- धमार, ठुमरी, भजन। आज के दौर में गज़ल ने काफी लोकप्रियता पाई है, इसमें खास बात ये है कि शख्स अपनी ज़िंदगी के एहसान और जज्बातों को बखूबी दिलोज़ेहन में उतारता हुआ पेश करता है और गज़ल ही एक जरिया है, खुदा से संबंध का। जहां तक मेरे शौक का प्रश्न है तो यह मैं पूरे हौसले और विश्वास से कह सकता हूं कि संगीत का माहौल मुझे विरासत में ही मिला है। मेरे पिता स्व. रतनचंद वर्मा ने लाहौर (पाकिस्तान) में उस्ताद फतेदिन खां साहब, जो कि पंजाब घराने से ताल्लुक रखते थे, से शिक्षा ली थी। गज़लों का चुनाव, उन्हे शास्त्रीय रागों में ढ़ालना और फिर उसे बेहद खूबसूरती के साथ पेश करने के अंदाज़ से, मैंने पिताजी की शिष्यता में ही आठ वर्ष की उम्र से इसका अभ्यास शुरू किया।

? इन दिनों गज़ल काफी लोक प्रिय है, परन्तु पूर्व की तरह यह पारंपरिक सीमित वाद्य यंत्रों की सीमा में न बंध, पूरे आरकेस्ट्रा के साथ प्रस्तुत की जाती है। इसके बदले स्वरूप में मधुरता का अहसास कम होता है। क्या इससे आप सहमत हैं?

□□ जी हां, आज पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करने में लोग अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं, इसलिये कमजोर गजलों की खामियों को छुपाने के लिये आरकेस्ट्रा के प्रयोग ने इसे बहुत ही साधारण बना दिया है। पहले शास्त्रीय रागों और उर्दू की शायरी को ही ऐहमियत देने के कारण सीमित वाद्य वृंदों का उपयोग होता था, परंतु आज का दौर आरकेस्ट्रा और साधारण धुनों का है, लेकिन धीरे– धीरे शास्त्रीय संगीत ही अपना स्थान बनाएगा और इसी रूप में गज़लों का दौर चलेगा।

? आप गायन का प्रशिक्षण भी देते हैं। नए छात्र– छात्राओं को इस विधा की जानकारी आप कमशः किन- किन पहलुओं पर दे कर प्रशिक्षित करते हैं?

□□ सबसे पहले तो हमें उस विद्यार्थी के संगीतमय माहौल (घर के) की जानकारी लेनी पड़ती है। यह बेहद जरूरी है। इस विद्या की साधना हेतु छोटी उम्र ही अधिक उपयुक्त होती है, चूंकि उस उम्र में स्मरण शक्ति बेहद तेज होती है। इसके बाद उन्हें शास्त्रीय रूप में स्वरों का ज्ञान कराने के साथ- साथ अलंकारों का ज्ञान कराया जाता है, जो संगीत का मूल पक्ष है। फिर इन्हीं अलंकारों को तालबद्ध कर सिखाने से विद्यार्थी को स्वर और ताल का ज्ञान होने लगता है, इसके साथ ही उनकी रुचि को बनाए रखने के लिये गायन सुनाना बेहद आवश्यक होता है, जिससे कि उनका शौक बढ़े और वे कमशः आगे बढ़ने में सफल हों।

? आज चंद संस्थाओं ने संगीत एवं कला केन्द्रों को व्यवसाय -सा बना लिया है। संगीत की विविध कलाओं की शिक्षा, संस्थाएं बेहतर प्रदान करती हैं या घराने

या इस विद्या में अरसे से जुड़े पीढ़ियों से सृजनरत वरिष्ठ कलासाधक।

□□ इसमें कोई शक नहीं कि हर इंसान को आगे बढ़ाने के लिये सहारे की जरुरत पड़ती है, उसी तरह कला क्षेत्र में भी संस्थाओं का होना बेहद जरूरी है। डिग्री यानी प्रमाण– पत्र पाने के लिये विद्यालयों और संस्थाओं में अध्ययन आवश्यक है, क्योंकि इन्हें ही मान्यता मिलती है। ये संस्थाएं विद्यार्थी के भविष्य को स्थाई मजबूती प्रदान करती हैं, परंतु संस्थाओं की शिक्षण पद्धति में समय की पाबंदी रहती है, अतः सीमित समय में अधिकाधिक विद्यार्थियों को ज्ञान देने से विद्यार्थी संगीत के तत्वों को आत्मसाध करने में कठिनाई महसूस करता है, अतः किसी अच्छे गुरू या उस्ताद, जो कि घराने से सम्बंध रखते हैं, का शागिंद बनना स्वाभाविक है, अब जहां तक व्यवसायीकरण का प्रश्न है, तो प्रारंभ में किसी भी संस्था का उद्देश्य आयोपार्जन नहीं होता। संस्था की ख्याति व विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि से ही यह दोष आ जाता है, इसलिये मेरा पूरा विश्वास है कि गुरु या उस्तादों की शागिर्दी में ही संगीत का सही ज्ञान मिल सकता है।

? आज के बदलते माहौल में क्या एक गुरु- शिष्य परंपरा कायम रह पाएगी?

□□ पहले उस्तादी परंपरा कायम थी, अभी भी उस्तादों के पास उसी प्रकार तालीम ली जाती है। आज भी अपने देश में ख्याति प्राप्त कलाकारों– पं. भीमसेन जोशी, पं. जसराज जैसे घरानेदार उस्तादों के पास भी शागिंद शिक्षा ले रहे हैं। इसलिये मेरा पूरा विश्वास है कि गुरू- शिष्य परंपरा किसी भी बदलते माहौल में खत्म नहीं हो सकती।

? उत्कृष्ट व कर्णप्रिय गजल गायन के अनिवार्य पक्ष कौन से हैं, एक नये गायक को जिसके पूर्वाभ्यास की आवश्यकता अनिवार्य रूप से हो?

□□ इसमें कइ बातें हैं, लेकिन खास बात यह है कि गजलों की शैली को अपनाने के लिये शास्त्रीय संगीत का अभ्यास बेहद जरूरी है, इसके बिना गजल पेश करना नामुमकिन है। इसके साथ- साथ अपने में धैर्य, विश्वास और मेहनत को बरकरार रखें, जिससे कि उसमें गंभीरता, कमबद्धता, स्वाभाविकता और मधुरता का समावेश हो। जिसे श्रोता– वर्ग ज्यादा पसंद -कबूल करें, मैं ऐसी गजलों को अधिक अहमियत देता हूं।

? गायन में किन– किन गायकों ने आपको बेहद प्रभावित किया है?

□□ वैसे तो बहुत से गायकों की शैली को पसंद करता हूं, लेकिन खास तौर पर पटियाला घराने के उ. बड़े गुलाम अली खां साहब, उस्ताद अमानत अली फते अली बरकत अली खां साहब की गायकी ने हकीकतन मुझे खास प्रभावित किया।

? इस क्षेत्र में अब तक की आपकी उल्लेखनीय उपलब्धियां क्या रही हैं?

□□ मैंने शालेय व महाविद्यालय की प्रतियोगिताओं के आलावा स्थानीय और निकट के शहरों में भी कार्यक्रम पेश किये हैं। १९७८ में आल इंडिया रेडियो में सुगम संगीत की प्रारंभिक प्रतियोगिता में म.प्र. की ओर से अवसर मिला और १९८२ में आकाशवाणी रायपुर से सुगम संगीत (गजल) में आडिशेन पास किया। १९८५ नव.– दिसंबर में अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय बंबई द्वारा संगीत अलंकार प्राप्त किया है।

विनोद पाठक राहुल